International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

गंगा प्रसाद विमल के काव्य में आम आदमी की पीड़ा

नाम : कान्ता देवी
शोधार्थी : पीएच.डी.
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक।
Email: ruhela87kanta@gmail.com

आधुनिक युग भावनाओं व विचारों की सार्वजनिक विकृति का युग है। लेखक जितना जागरूक होता है, उसके सम्मुख उतनी ही समस्याएँ मुंह फाड़े खड़ी होती है। गंगा प्रसाद विमल इन समस्याओं से भली–भांति अवगत है। साहित्य में कुछ बुनियादी सरोकार होते हैं। उन सरोकारों को वे परत–दर–परत उघाड़ते नजर आते हैं। वे हमेशा से प्रयास करते हैं कि उनके द्वारा रचा गया इतिहास सार्थक हो। इसी कारण पाठक उनके साथ आत्मीय संबंध बना लेता है। डॉ. गंगा प्रसाद विमल हिन्दी साहित्य में अकविता आन्दोलन के जनक माने जाते हैं। इन्होंने हिन्दी साहित्य में अनुवादक, उपन्यासकार व कथाकार के रूप में कार्य किया है। ये कई सरकारी सेवाओं में कार्यरत रह चुके हैं तथा कई राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय पुरुस्कारों से सम्मानित हो चुके हैं। विमल का काव्य आम आदमी की आवाज है? जिसमें उन्होंने समाज के प्रताड़ित, दलित, बुझे व टूटे, अपनी अस्मिता की तलाश में फिरते आम आदमी के प्रति उनकी सहानुभूति व संवेदना प्रकट की है।

आज हर जगह आम आदमी चर्चा का विषय बना हुआ है। 'आम आदमी' आम शब्द मनुष्य में किसी जाति विशेष का सूचक नहीं है, अपितु साधारण और सामान्य जैसे शब्दों का पर्याय है।''[1] इस प्रकार समाज का विकास दो तरह से ढका हुआ है। प्रथम जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं द्वारा निर्मित व्यवस्था से द्वितीय स्वयं द्वारा निर्मित, नव निर्मित स्वार्थ केन्द्रित व्यवस्था से।''[2] आम आदमी की कोई जाति नहीं होती है बल्कि समाज में उत्पन्न परिस्थितियाँ आम आदमी को जन्म देती है। कुछ लोग आम आदमी का संबंध निम्न वर्ग से मानते हैं, लेकिन इस गरीबी रेखा के नीचे नहीं रखा जा सकता। आम आदमी वो है जिसके बाल तैंतीस साल में ही झड़ गए थे और सफेद थे उसके माथे पर आड़ी तिरछी सैकड़ों झुर्रियाँ बन गयी थी, उनकी गर्दन जो स्पोड़ोलाईसीस में अकड़ जाती थी उसकी नींद जो कई–कई रातों तक उसकी आँखों में सिर्फ धुआँ देकर जलाती थी। इसी मूर्छा की देन थी। इस मुर्छा में हल्के भुरे रंग का अंधकार होता था। जिसमें मैले–पीले रंग के चमगादड़ों जैसे धब्बे उड़ते थे।''[3] उसकी पत्नी की हालत उससे भी अधिक खराब है। ''वह बीमार, बूढ़ी, युवती लकड़ी जैसी औरत जिसके शरीर में अब सिर्फ हड्डियाँ थी, जो दस वर्षों से किसी क्रूर जादू से छह पेटों में अन्न डाल रही थी, जो एक बार ठीक से सोने के लिए संघर्ष में संलग्न थी, जिसकी चिड़चिड़ाहट और कर्कशता इवान परिवार के ऊपर टूटती रोज–रोज की विसंगतियों के खिलाफ एक दारूण और क्रूर प्रतिरोध थी।''[4] आम आदमी की दशा शुरू से ही बेहद शोचनीय रही है, न केवल राजनैतिक व आर्थिक रूप से बल्कि मानसिक रूप से भी वह सबसे ज्यादा त्रस्त रहा है। उसकी बदलती मनोदशाओं, अतृप्त आकांक्षाओं व उससे उत्पन्न कुंठा, नपुंसक आक्रोश आदि मनोभावों को विमल ने अपने काव्य का विषय बनाया है।

यदि हम आज के परिवेश को देखें तो आम आदमी की दशा पशु जैसी हो गयी है जिसकी छड़ी व लगाम शक्तिशाली लोगों के हाथ में है। उनका जो मन करता है वही आम आदमी से कराते हैं और विवश होकर उन्हें वह करना पड़ता है। इसी पीड़ा का मार्मिक दस्तावेज इन पंक्तियों में हुआ है–

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

हिस्कार या छड़ी से/लगाम के कसाव से

बस बढ़ने के लिए/विवश थे।''[5]

जीवन में प्रतिस्पर्धा के इस दौर में व्यक्ति समाप्त होता जाता है उसे लक्ष्य तक नहीं मिलता। इस भौतिकवादी युग में हर सुख उससे छूटता जा रहा है और न ही उसे सफलता मिल पा रही है। भविष्य के प्रति एक अजीब–सा भय उसके मन में बना हुआ है–

छूटता ही रहता है/सफलता का सिरा

छूटता ही रहता है/भविष्य/अनदिखा।''[6]

गंगा प्रसाद विमल की 'सन्नाटे से मुठभेड़' काव्य संग्रह आम आदमी की स्वयं से प्रश्न व उन प्रश्नों का स्वयं से ही उत्तर ढूंढ़ने का मार्मिक दस्तावेज है।

वर्तमान समय में आम आदमी स्वयं के अस्तित्व की तलाश में भटक रहा है, अस्तित्व की तलाश वर्षों से कर रहा है, वह क्या कर रहा है, उसे कुछ पता नहीं होता। इसलिए उसे अपने ऊपर ही गुस्सा आता है। वह समझ नहीं पा रहा है कि वह करें तो क्या करें–

बहुत दिनों से/मैं अपने आप पर

एक गुस्सैल जानवर की तरह टूटना चाहता हूँ

पर कहाँ प्रहार करूँ

यह खोजते चौथाई सदी बीत रही है।''[7]

वर्तमान युग में आम आदमी जिन्दगी जीता नहीं है बल्कि जिन्दगी उसे जीती है। आज आम आदमी अपनी इच्छा के विरुद्ध कार्य करने को विवश है जो वह करना चाहता है वह कर नहीं पाता। और अंत में जो सपने देखे थे भूलना पड़ता है। परिस्थितियों से लड़ते–लड़ते अंत में अपनी हार स्वीकार कर लेता है। व्यक्ति की इसी छटपटाहट को विमल ने इन पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है–

मैं जिसे पाना चाहता था/वह

निर्माता ने गढ़ा नहीं/अपनी कल्पनाओं में

रच–रच कर अंत में/मैं उसे भूल गया।''[8]

आम आदमी अपने अस्तित्व को बचाने के लिए दिखावटी मुखौटा ओढ़ने के लिए मजबूर है, क्योंकि वह उसी रूप में दिखना चाहता है जिस रूप में समाज उसे देखना चाहता है जबकि अन्दर से वह अत्यंत कमजोर व लाचार है। अपने ढंग से जीवन न जीने की त्रासदी विमल ने इन पंक्तियों में अभिव्यक्त की है–

सब दूसरों के लिए दूसरे हैं/खुद के लिए हम

हम अपने लिए जो हैं

बेहद कमजोर/बेहद बेबस।''[9]

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

भूमंडलीकरण की दौर में आम आदमी बिल्कुल अंधा हो गया हैं उसे अब भविष्य में कुछ दिखाई नहीं दे रहा है। वह सिर्फ कल्पनाओं में खोया रहता है। अपने उद्देश्यपूर्ति की जिद में इतना महत्त्वाकांक्षी हो जाता है कि जब तक वहाँ पहँचता है, सब कुछ समाप्त हो जाता है और लक्ष्यहीन भटकता रहता है और हाथ में आती है सिर्फ निराशा–

न तो दीखता हुआ
सिवा सपने में भटकता मैं
मेरे इस सपने में सोया गाँव सच था
सपने में/जगाने पर जितना मैं
इन दो सत्यों के बीच
सपने की भटकन–सा/भटकता हूँ मैं
मैं कहाँ सच हूँ/वहाँ
कि यहाँ?''[10]

आज आम आदमी परिस्थितियों के साथ–साथ निर्ममता से जूझ रहा है। व्यक्ति प्रश्नों से हमेशा घिरा रहता है, यह प्रश्न उसका स्वयं से है जिसका उत्तर भी उसे स्वयं ही ढूंढ़ने है जो कि मिल नहीं पा रहे। विमल जी ने व्यक्ति के अंतर्मन की पीड़ा को 'वहाँ मैं हूँ' काव्य संग्रह की इन पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है–

क्या केवल/ऐसे ही
घिरते रहेंगे हम/सदियों से
सदियों तक/प्रश्नों के घेरे में।''[11]

आधुनिक युग में आम आदमी इसी उधेड़बुन में लगा रहता है कि उसका अस्तित्व है भी या नहीं। स्वयं को शून्य में कैद कर अस्तित्व समझने की तड़त आम आदमी में है। साधारण जनता संवेदनशील होती है। वह अपनी समस्या को कभी अभिव्यक्त नहीं कर पाते। विमल जी ने उनकी इस पीड़ा को इन पंक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है–

कहीं है तो कहीं वजूदहीन
ऐसा ही कुछ
है भी और नहीं भी शून्य में
और उसी में कैद हूँ मैं।''[12]

व्यक्ति सुखद भविष्य की तलाश में अपनी मंजिल की तरफ चलता रहता है। परन्तु वह पहुँच कभी नहीं पाता। इन पंक्तियों में कवि ने आम आदमी की करुण, त्रासदी, घूटन व पीड़ा को अभिव्यक्त किया है–

चल रहा हूँ में भी/गंतव्यों की ओर
पर पहुँचता हूँ कहीं भी नहीं।''[13]

आज आदमी के घर पर जन्म से ही दुख का साया छाया रहता है। लेकिन फिर कभी वह अपने मुख पर एक बनावटी हँसी बनाए रखता है–

मेरी हँसी में,

सिर्फ बनावट है, दिखावट है, विनोद में

जन्मजात दुःख पसरा है मेरे घर

चारों ओर दूसरों से छूटा।''[14]

निष्कर्षतः आम आदमी परिस्थितियों के साथ–साथ निर्ममता से जूझ रहा है। उसका यह जूझना विविध स्तरों पर विद्यमान है। वह परिस्थितियों से लड़ते–लड़ते कभी अपनी हार स्वीकार कर लेता है तो कभी वह अपने आप में कुंठित होता है। इसी कारण उसका जीवन वेदना से भरा होता है।

गंगा प्रसाद विमल ने आम आदमी की तुच्छ, निरीह स्थिति, उसकी जटिल परिस्थितियाँ तथा उसकी त्रासदी को महसूस किया है। आम आदमी के लिए सुख भविष्य एक सपना है, वह जीवन की दौड़ में पीछे रह गया है, जिसके कारण वह दुखी है, वह स्वयं से नाराज है, अपने दर्द को अभिव्यक्त करने में असमर्थ है। आम आदमी की इसी पीड़ा को विमल जी ने अपनी कविताओं में चित्रित किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, पृ. 79
2. श्यामनारायण दुबे, विकास का समाजशास्त्र, पृ. 19–20
3. उदय प्रकाश, हिन्दुस्तानी इवान दानिसोविच की जिन्दगी का एक दिन, पृ. 71
4. पुन्नी सिंह, विडम्बना, निष्कर्ष (मासिक) संपा, गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव, सुलतानपुर
5. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, सन्नाटे में मुठभेड़, घोड़ों को मालूम न था, पृ. 47
6. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, सन्नाटे में मुठभेड़, परिज्ञान की यातना, पृ. 22
7. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, सन्नाटे में मुठभेड़, बहुत दिनों से, पृ. 38
8. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, सन्नाटे में मुठभेड़, आधे का पूरापन पृ. 53
9. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, सन्नाटे में मुठभेड़, दूसरों के लिए, पृ. 55
10. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, मैं वहाँ हूँ, पृ. 25
11. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, मैं वहाँ हूं, प्रश्नों के घिरे प्रश्न, पृ. 58
12. डॉ गंगा प्रसाद विमल, अलिखित–अदिखत शून्य, पृ. 9
13. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, कुछ तो है, गंतव्य, पृ. 112
14. डॉ. गंगा प्रसाद विमल, खबरें और अन्य कविताएँ, हैं कुछ बाकी, पृ. 16